डॉ0 राम मनोहर लोहिया के विचारों का दार्शनिक विवेचन

रत्नेश कुमार*

डॉ0 राम मनोहर लोहिया कि विचारधारा में एक ओर अद्वैत वेदांत का प्रभाव तथा मानवतावादी विकासवादी विचारधारा की झलक मिलती है, वहीं दूसरी तरफ क्रान्तिकारी भाव का दर्शन होता है। डॉ0 लोहिया ने भारतीयों में न केवल समता की भूख पैदा की बल्कि समतामूलक समाज कि स्थापना के लिए आन्दोलन, घेराव, सिविल नाफरमानी आदि को प्रोत्साहित किया। समाजवाद का दार्शनिक चिंतन अन्याय एवं दमन के विरूद्ध निरंतर जागरूकता एवं संघर्ष कर समता, स्वतंत्रता, स्वाभीमान एवं मानव गरिमा को साकार करने का है। इतिहास सदैव डॉ0 लोहिया को सशक्त समाजवादी एशियाई मसीहा के रूप में याद करता रहेगा। डॉ0 लोहिया का दर्शन देश एवं विश्व के युवा पीढ़ी के लिए हमेशा प्रेरणा स्त्रोत के रूप में प्रासंगिक एवं उपयोगी है।

डॉ0 लोहिया का दर्शन मार्क्सवादी एवं गांधीवादी दर्शन से भिन्न है। वे सामंतवाद और उपनिवेशवाद से अंतिम समय तक लड़ते रहे। जब हम वादी या प्रतिवादी होना छोड़ कर अपने मन को इस स्थिति में लायेंगे कि वह तथ्यों की जाँच करने तथा जीवन का नया ढांचा खड़ा करने के योग्य बने, तो यह हमें वर्त्तमान सभ्यता की चालक शक्तियों को समझाने और नई सभ्यता की चालक शक्तियों को समझाने और नई सभ्यता की चालक शक्तियों एवं प्रयोजन को तलाशने में सहायक होगा। डॉ0 लोहिया सिविल नाफरमानी, विकेंद्रीकरण और छोटी मशीनों कि अवधारणाएं तो ही, साधन–साध्य सुचिता दृष्टिकोण भी लिया। भारत के समाजवादी आन्दोलन में डॉ0 लोहिया पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने वर्ग संघर्ष और सिविल नाफरमानी में कोई फर्क नहीं माना। इन दोनों में समरूपता स्थापित करने के लिए उन्होंने एक तरफ वर्ग संघर्ष की सम्यवादी अवधारणा को संशोधित किया, वही दूसरी ओर सिविल नाफरमानी को भी गांधीवादियों के संकीर्ण दृष्टिकोण से मुक्त किया। सिविल नाफरमानी का मूल उद्देश्य है कि कमजोर, शोषितों में आत्मविश्वास पैदा करना कि वे बड़ी से बड़ी बुराईयों की ताकत का सामना करने में समर्थ हो जाये। डॉ0 लोहिया का मत है कि क्रोध के बिना प्रेम की क्रांति भी सफल नहीं हो सकती। सिविल नाफरमानी सिर्फ हृदय परिवर्त्तन का सिद्धांत नहीं है, वह अन्याय के प्रतिकार का एक ऐसा कारगर अस्त्र है जिसमें करूणा और प्रेम कि अनुभूति सामान रूप से अभिव्यक्त है। डॉ0 लोहिया का मानना है कि सत्य को हम पूरी तरह जान नहीं सकते क्योंकि उसके कुछ पहलू ही हमारे सामने उद्घटित होते है, सम्पूर्ण सत्य कभी प्रकट नहीं होता है। डॉ0 लोहिया जड़ चेतन के संबंध अपने पुस्तक ''इतिहास चक्र'' में एक दूसरे के पूरक और दोनों के बीच अन्योन्याश्रय संबंध बताया है। उनके विचारधारा में मानवतावादी एवं विकासवादी की झलक मिलती है, वही क्रांन्तिकारी भाव का भी दर्शन होता है। वर्ण व्यवस्था, चौखम्भा राज की परिकल्पना निश्चय ही उन्हें ऐसे राजनीतिक विचारों की श्रेणी में खड़ा कर देता है, जो समाजवादी होते हुए भी जनतांत्रिक व्यवस्था में अटूट आस्था एवं विश्वास रखता हो।

डॉ0 लोहिया की विशेषता थी कि वे राजनीति में सिद्धांत को सर्वोपरि मानते थे। उन्होंने सत्ता की राजनीति को कभी महत्त्व नहीं दिया। उनका मानना था कि राजनीति चरित्र का ह्रास करती है, और चरित्र के ह्रास होने का अर्थ है, देश का पतन। इसीलिए तो जनता का विश्वास लोकतंत्र में नहीं रहा जाता है। भारत का लोकतंत्र नौकरशाही पूंजीवाद, सामन्तवाद एवं जातिवाद के दलदल में फंस गया है। परिणामस्वरूप गरीब और गरीब तथा अमीर और अमीर बनता जा रहा है। पंडित नेहरू ने सत्ता की राजनीति कर, लोकतांत्रिक मूल्यों को खत्म कर दिया है। साथ ही नव सामंतवादी व्यवस्था में नौकरशाही को बढ़ावा देकर लोकतांत्रिक व्यवस्था को बदनाम कर दिया है। इसका कारण था कि उस समय नेहरू की दृष्टि यूरोप में पनप रही पूंजीवाद की ओर था और इसके विपरीत भारत में गरीबी बढ़ रही थी।

लोकसभा में डॉ0 लोहिया ने विरोध करते हुए कहा कि आज भी देश गिरवी है, क्योंकि कर्जे के रूप में ली गई राशि का उपभोग सामन्तवादी वर्ग ही कर रहे हैं। डॉ0 लोहिया का दृढ़ विश्वास वर्गहीन, जातिविहीन, गुटविहीन लोकतांत्रिक व्यवस्था में था। वे अशिक्षित, मजदूरों, दलितों, शोषितों, आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों आदि को न्याय दिलाने के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे। इसीलिए उन्होंने व्यावहारिक धरातल पर दो खम्भों वाली राज–व्यवस्था की जगह चौखम्भा वाली राजव्यवस्था को अधिक महत्त्व दिया। चौखम्भा राजव्यवस्था के अन्तर्गत ही पिछड़ों, शोषितों एवं गरीबों की उन्नति संभव है। गांधीजी की तरह डॉ0 लोहिया भी समाजवाद में भारतीय संस्कृति को जोड़कर अहिंसात्मक रूप से समाज को बदलना चाहते थे। लेकिन गांधी के हाथ–करघा पर डॉ0 लोहिया को विश्वास नहीं था। वे भारत जैसे गरीब देश के लिए छोटी–छोटी मशीनों के साथ ही मध्यमार्ग

***सहायक प्राध्यापक दर्शनशास्त्र विभाग, पी.आर.आर.डी. कॉलेज बैरगिनिया, सीतामढ़ी**

की तलाश कर रहे थे। किसी भी देश की उन्नति उसकी आर्थिक स्थिति पर ही अवलंबित है। इसके लिए आर्थिक स्थिति का मजबूत होना आवश्यक है। इसीलिए डॉ0 लोहिया ने चौखम्भा राज्य की परिकल्पना को साकार रूप देना चाहा था। डॉ0 लोहिया की स्पष्ट धारणा है कि सत्तारूढ़ दल की कथनी और करनी में फर्क है। आज देश के सामने आर्थिक विषमता है। देश में कोई भी ऐसा राजनीति दल नहीं है, जो सम्पत्ति तथा आय के समान वितरण की बात न करता हो, खासकर चुनावी भाषणों में, दुःख की बात है कि राजनीतिक रूप से भारत ने आर्थिक समानता को स्वीकार कर लिया है। उद्योगपतियों, धनी कृषकों, मजदूर नेताओं, व्यापारियों तथा भारतीय अर्थव्यवस्था के अन्य वर्गों ने भी व्यावहारिक धरातल पर नहीं।

गांधी ने सत्ता को 'जनता की धरोहर' की संज्ञा दी है और डॉ0 लोहिया ने चौखम्भा राज्य की परिकल्पना की है। जिसमें सत्ता को गाँव, जिला, राज्य और केन्द्र में विकेन्द्रित किये जाने की व्यवस्था है। डॉ0 लोहिया के अनुसार मानव जाति का कल्याण न साम्यवाद से संभव है और न कथित लोकतंत्र से। डॉ0 लोहिया समाजवाद को आर्थिक नीतियों के रूप में जीवन–दर्शन मानते थे। कोई भी सच्चा समाजवादी केवल आर्थिक सुधारों से ही संतुष्ट नहीं होता है, बल्कि अपनी एक विशिष्ट शैक्षणिक नैतिक एवं सौंदर्यशास्त्रीय नीति का भी प्रतिपादन करता है। डॉ0 लोहिया राजनीतिक सौदेबाजी के चक्रव्यूह से अलग रहते थे। देश की भूख नंगी गरीब जनता के लिए लोकतंत्र के अर्थ को स्पष्ट किया। जातिवादी, पूंजीवाद, नवपूंजीवाद, परिवर्तित सामंतवाद अधिनायकवाद आदि ऐसे ही तत्व थे, जो देश की राजनीति की कमर तोड़ रहे थे। धर्म के नाम पर देश को विभाजन का विरोध करने में वे गांधीजी से एक कदम आगे थे। इन सारी समस्याओं के समाधान के पश्चात् ही समतामूलक समाज एवं विशेषाधिकार की कल्पना सार्थक होगी। वस्तुतः विषमता और विशेषाधिकार में अन्योन्याश्रय संबंध है। जहाँ विशेषाधिकार है, वहाँ विषमता है और वहाँ किसी–न–किसी तरह से सीमित विशिष्ट वर्ग के हाथों में विशेषाधिकार है। समाजतंत्र, राजतंत्र और अर्थतंत्र के कण–कण में विषमता का विष व्याप्त है। पारस्परिक ऊच–नीच पर आधारित हजारों जातियों से बना हमारा सामाजिक ढांचा जो अभी भी बदला नहीं जा सका है। सामाजिक संरचना के पुर्निमाण के लिए डॉ0 लोहिया ने सामाजिक क्रांति का बिगुल फूंका था। लेकिन दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इस देश में हमेशा ही अपने को आधुनिक कहने वाले लोग जाति व्यवस्था के साथ जुड़ी सामाजिक विषमताओं को नकारते रहे हैं। उनका तर्क रहता है कि देश में विषमताएँ भी आर्थिक विषमताओं के ही कारण है। उनका विश्वास है कि आधुनिक शिक्षा–दीक्षा, औद्योगिकीकरण के साथ सामाजिक विषमताएँ स्वतः मिट जायेगी। लेकिन यह तर्क वास्तविकता से बहुत दूर है।

डॉ0 लोहिया का सामाजिक–दर्शन इन तर्कों से अलग है। उनका उद्देश्य और प्रयास यही है कि सभी जातियों के श्रमजीवियों को एक मंच पर लाने के लिए राजनीतिक दलों कामगार संघों, सहकारी संस्थाओं आदि के माध्यम से शैक्षणिक और आर्थिक कार्यक्रमों का संचालन होना चाहिए। जब–तक इन तथ्यों को व्यावहारिक रूप से परिणत नहीं किया जायेगा तब–तक समतामूलक समाज की कल्पना संभव नहीं हैं। इतना ही नहीं इन मूलभूत सामाजिक समस्याओं के साथ और भी बहुत सी छोटी–छोटी समस्याएँ जुड़ी हुई है, जो सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है।

पूंजीवाद और समाजवाद (मार्म्सीय मानते रहे हैं कि व्यक्ति अपने आप से अच्छा बनना या करना आवश्यक नहीं है। लेकिन अच्छा चिंतन और सदाचरण सन्त और ऋषि दोनों का मिलन होना चाहिए, क्रांति और अध्यातिमकता का संगम होना चाहिए। डॉ0 लोहिया समदृष्टि, समलक्ष्य और समबोध के हिमायती है, अर्थात् नर–नारी समता, व्यक्ति–व्यक्ति के बीच समता, लेन–देन में समता, अर्जन और व्यय में समता, मूर्त और अमूर्त की समता आदि। यह पथ है, शांति और विश्व–व्यवस्था का, उदासी में उल्लास, उल्लास में उदासी याद रखने का। इस पथ पर संगठन और आन्दोलन, हैसियत बनाम क्रियाशीलता के अहसास, सिद्धांत और कार्यक्रम की दूरी के बोध का महत्त्व है। समता के आदर्श को साकार करके ही समाजवाद सार्थक हो सकता है। इसके लिए डॉ0 लोहिया ने सप्तक्रांति की कल्पना की है।उन्होंने विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर विचार करते हुए देश की आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, बौद्धिक समस्याओं का सम्यक् विवेचन नहीं किया है, बल्कि उसके समाधन का भी प्रयास किया है। प्राचीन काल से ही मनीषी और समाजसुधारक न्याय, नैतिकता, कर्त्तव्य–विभाजन, विधि–विधान की व्यवस्था तथा लोकहित की प्रमुखता दी। किन्तु इस दिशा में एक नई क्रांति फ्रांसीसी क्रांति के द्वारा हुई, जिसने राजतंत्र का उन्मूलन किया और स्वतंत्रता, समता तथा विश्वबंधुत्व के सामाजिक मूल्यों का प्रस्ताव किया। तत्पश्चात् विज्ञान और तकनीकी के विकास के साथ ब्रिटेन सर्वाधिक समृद्ध देश बन गया। उसने अपने यहाँ उदारवादी लोकतंत्र की स्थापना की, किन्तु विश्व में उसने अपने उपनिवेश बनाये, जिनके आर्थिक शोषण पर उसकी समृद्धि निर्भर हुई। फ्रांस, जर्मनी आदि यूरोप के देशों को परतंत्र बनाया और उनका आर्थिक शोषण किया रूस की राज्यक्रांति ने औद्योगिक क्रांति का प्रयोग पहली बार समाजवाद के पक्ष में किया और उसके कारण बढ़ते हुए पूंजीवाद का उन्मूलन करने का प्रयास किया। इसी दौरान भारत में राज्यक्रांति हुई, जिसके फलस्वरूप उपनिवेशवाद का अंत हुआ और राष्ट्रों की समानता के आधार पर विश्वबंधुता का आदर्श साकार होने लगा किन्तु

स्वतंत्रता, समता और विश्वबंधुत्व के अनुरूप जो सामाजिक–शांति तथा निर्विवाद है कि यह सिद्धांत वेदांत के पारमार्थिक आदर्श को समाज में मूर्तरूप देने का एक सराहनीय प्रयास है। आत्मज्ञान के महत्त्व को बताते हुए उन्होंने कहा कि मनुष्य अपने को जान जाता है, तब समग्र से पृथक होने पर वो दुखी होता है और इसके साथ उसे अपने आत्मज्ञान पर एक आनंदबोध होता है और तबतक वह सोचना शुरू करता है कि वह कैसे समग्र से अपने को संयुक्त करें। इस प्रकार प्रयोजनों की खोज शुरू होती है। निश्चित ही यहाँ आत्मज्ञान का स्वरूप और उसकी विधि अद्वैतवेदांत के आत्मज्ञान से स्वरूप एवं विधि से भिन्न है। आत्मबोध का अर्थ सर्वोतम बोध है। आत्मा सीमित, संकुचित, स्वार्थी, प्रत्यय का नाम नहीं है, वह तो सार्वजनिक, सर्वव्यापी, समशिष्टिगत सत्ता है। इस रूप में उसका ज्ञान प्राप्त करना वेदांत और दोनों का लक्ष्य है। मानव का चरित्र समाजवाद के लिए उतना ही उपयोगी है जितना समाज की व्यवस्था।

डॉ0 लोहिया ने समाजवाद का प्रतिपादन विश्व के सन्दर्भ में किया है। पश्चिमी सभ्यता और राज व्यवस्था यहाँ तक कि समाजवादी पद्धति की भी तीव्र आलोचना करते हुए कहा कि पश्चिमी सभ्यता में गतिमयता तो है परन्तु दिशाहीनता भी है। क्रांति और अध्यातिमकता का संगम होना चाहिए। वे समदृष्टि, समलक्ष्य और समबोध के हिमायती है और समता के आदर्श को प्राप्ति के लिए सप्तक्रांति की कल्पना की। उनके सामान्य समाजवाद मान्यता में समष्टिगता मानवीय संवेदना है। प्राचीन काल से ही मनीषी और समाज सुधारक न्याय, नैतिकता, कर्त्तव्य–विभाजन, विधि–विधान की व्यवस्था तथा लोकहित की प्रमुखता दी किन्तु स्वतंत्रता, समता और विश्वबंधुत्व के अनुरूप जो सामाजिक शांति तथा मानव–चरित्र अपेक्षित है, उसकी ओर पश्चिम के समाजवादी विचारकों का ध्यान नहीं गया, जबकि डॉ0 लोहिया के विचारधारा में एक और अद्वैत वेदांत का प्रभाव तथा मानवतावादी विकासवादी विचारधारा की झलक मिलती है, वही दूसरी तरफ क्रांतिकारी भाव का भी दर्शन है।

सन्दर्भ सूचिः–

1. लोहिया, धर्म पर एक दृष्टि, लोहिया विचार प्रकाशन निष्ठा, कानपुर–1980
2. लोहिया, मार्क्सवाद और समाजवाद, पृ0–30–31
3. लोहिया, इतिहास चक्र–लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0–48
4. लोहिया सप्तक्रांति, पृ0–25
5. डॉ0 राम मनोहर लोहिया रचनावलीः एक परिचय, खंड–1, संपादक–मस्तराम कपूर

6. डॉ0 संगम लाल पाण्डेय, समाज, धर्म और राजनीति, डॉ0 लोहिया का अभेद्वाद, दर्शनपीठ, इलाहाबाद, 1981, पृ0–65–66
7. डॉ0 जटाशंकर तिवारी, वेदांती समाजवाद, केंद्रीय विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
8. डॉ0 रत्नेश कुमार, डॉ0 राम मनोहर लोहिया के आर्थिक नव–निर्माण एवं सामाजिक रूपांतरण का दार्शनिक विवेचन, पी.एच.डी. शोधग्रंथ, 2015

****